छठा अध्याय

रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में कला पक्ष एवं भाव पक्ष -

साहित्यिक रचना का वह पक्ष जिसमें उसकी निष्पत्ति रस का सांगोपांग वर्णन या विवेचन होता है। जिसमें विशेष रूप से विषयगत भावनाओं, संदेश, कल्पनाओं तथा विचारों की प्रधानता होती है ,उसे भावपक्ष कहते हैं। छंद, अलंकार, भाषा, शैली इत्यादि कलापक्ष के अंतर्गत आते हैं।

अभावग्रस्तता से कृति अपूर्ण एकांकी और निकृष्ट कोटि की हो जाती है, इसी तरह रचना में किसी एक की प्रबल उपस्थिति से रचना एकपक्षीय व अधूरी रह जाती है तथा इससे रचना और रचनाकार दोनों का साहित्यिक अवमूल्यन हो होता है। एक प्रतिभासम्पन्न साहित्य सर्जक से अपेक्षा होती है कि वह अपने सृजन- व्यापार में कथ्य एवं शिल्प की समान महत्ता को दृष्टिगत रखते हुए ही रचना कर्म का निर्वाह करें, यह कृति की उत्तमता व उसके स्वरूप तथा अर्थ के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए भी आवश्यक होता है।

साहित्य की समीक्षा और मूल्यांकन के प्रतिमानों के निर्धारण में साहित्य चिंतकों तथा आलोचकों ने रचना के भावपक्ष और कलापक्ष की महत्वगत समरूपता को स्वीकार किया है, इसलिए कथानक व उद्देश्य के साथ-साथ भाषा एवं शैली को भी साहित्यिक मानदंड के रूप में प्रतिष्ठित किया गया। रचना में उद्देश्य की व्यापकता, ढाँचागत एकरूपता, उपयोगिता तथा प्रभावात्मकत्ता आदि की दृष्टि से इन साहित्यिक कसौटियों की प्रासंगिकता और तार्किकता निभ्रात सिद्ध है। किसी भी साहित्यिक कृति के मूल्यांकन में मूल्यांकनकर्ता अथवा समीक्षक द्वारा रचना की समग्रता को ही सर्वाधिक महत्व दिया जाता है, जिससे उसका सम्पूर्ण वैशिष्ट्य सामने आ सके। यहाँ रचना की समग्रता का आशय उसके भावपक्ष (कथ्य) और कलापक्ष (शिल्प) की समान उपस्थिति से ही है। मॉरीशस के विचार सम्राट रामदेव धुरंधर जी के साहित्य का मूल्यांकन भी इन्हीं पक्षों की प्रबलता या निर्बलता के आधार पर करना अधिक समीचीन प्रतीत होता है। इसी क्रम में सर्वप्रथम उनके साहित्य के आन्तरिक अवयवों का विश्लेषण 'किया जायेगा, तदन्तर शिल्पगत समीक्षा जिससे तटस्थापूर्वक उनकी साहित्यिक उपादेयता एवं सृजन अभिक्षमता की मूल्यगत व प्रभावगत विवेचना की जा सकें।

रामदेव धुरंधर का साहित्य : कथ्य निरूपण

कथ्य निरूपण से आशय साहित्यकार द्वारा उसकी रचनाओं में वर्णित घटना व्यापार अथवा विषय-वस्तु से होता है, क्योंकि साहित्य सर्जक का वैचारिक आयाम बहुत विस्तृत होता है, इसलिए वह अपने अन्त:करण में उत्पन्न भावों के साथ-साथ भौतिक जगत की अनुभूतियों, सहानुभूतियों तथा विसंगतियों आदि को भी अपने साहित्यिक कर्म में विविध विधाओं के द्वारा व्यक्त करता है। साहित्यकार जिस देश अथवा समाज में रहता है, वहाँ की धर्म, संस्कृति, राजनीति एवं प्राकृतिक पर्यावरण आदि का आकलन उसकी रचनाओं में होता ही है। कभी-कभी वह अन्तर्राष्ट्रीय विषयों को भी कथानक का स्वरूप प्रदान कर देता है, यह पूर्णतः उसकी चिंतन दृष्टि पर आधार रखता है। विचारों की व्यापकता से का अन्वेषण स्वत: ही हो जाता है। वर्तमान मानव-जीवन का प्रत्येक क्षेत्र स्वयंमेव ही विविधताओं से भरा पड़ा है इसलिए साहित्य लेखन के लिए विषयों के खोज की आवश्यकता नहीं रह गयी है। यह बात मॉरीशस और रामदेव धुरंधर पर भी समान रूप से लागू होती है। सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं भाषाई मिश्रण वाला देश होने के कारण मॉरीशस का जन-जीवन भी विसंगतियों तथा विविधताओं से भरा पड़ा है। यहाँ तो जीवन का प्रत्येक क्षेत्र ही सप्तरंगी है। बहुत दिनों तक ब्रिटेन और फ्रांस का उपनिवेश रहने के कारण यदि आर्थिक संसाधनों का असमान वितरण किया गया तो राजनीति भी प्रभुत्वशाली लोगों के नियन्त्रण में होने से वर्ग विशेष का प्रतिनिधि मात्र बनकर रह गयी। भारत के समान मॉरीशस की सामाजिक संरचना भी अत्यन्त जटिल है। यद्यपि यहाँ के सामाजिक संगठन में भारतीय मूल के लोगों की ही बहुलता है तथापि ब्रिटिश और फ्रांसीसी नीति-नियंताओं के संयुक्त तत्वविधान में निर्मित समाज व्यवस्था में व्यक्तिगत हितों के संरक्षण के कारण जातिभेद-वर्गभेद आदि की स्थिति उत्पन्न हुई। धर्म, संस्कृति और भाषा में भी यही भेदभाव परिलक्षित होता है। हिन्दू, ईसाई, मुस्लिम आदि धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों के बीच जबरन ईसाइयत को थोपने से जहाँ अन्य धर्मावलंबी अपने को उपेक्षित से पाते हैं, वहीं इससे धार्मिक टकराहट भी बढ़ी है। भारतीय संस्कृतियों तथा परम्पराओं के साथ-साथ मारीच देश में पाश्चात्य परम्पराएँ भी पल्लवित एवं पुष्पित हुईं, जो कि वहाँ के साहित्य और समाज में स्पष्टतः दृष्टिगोचर होती हैं। सर्वाधिक विविधता भाषा के स्तर पर दिखाई देती है, जिसमें विभिन्न वर्ग के लोगों द्वारा भोजपुरी, अंग्रेजी, फ्रेंच, क्रियोली व उर्दू आदि भाषाओं का प्रयोग शामिल है। इनमें से अंग्रेजी और फ्रेंच ने

राजनीतिक सह पाकर देश में अपना अधिपत्य स्थापित कर लिया, जबकि अन्य भाषाओं का विकास मार्ग अवरूद्ध सा हो गया तथा इससे भाषाई संघर्ष की स्थिति ने जन्म लिया जो राजनेताओं के लिए वोट लेने का हथियार बनी। इसी तरह द्वीपीय मॉरीशस का भौतिक पर्यावरण भी बरबस ही हृदय को आकर्षित करने की क्षमता रखता है, फिर चाहे वह साहित्यकार हो अथवा साधारण जनमानस या फिर पर्यटक के रूप में बाहर से आगन्तुक सभी इसके दुर्लभ व मनोहारी रूप को देखकर मुग्ध हो उठते हैं।

तात्पर्य यह है कि मॉरीशसीय पृष्ठभूमि स्वयं ही इतनी अधिक विविधताओं एवं विद्रूपताओं से परिपूर्ण है कि यहाँ के साहित्य सृजनकर्ताओं को अपनी रचनाओं में कथ्य के अन्यत्र निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं पड़ती। रामदेव घुरंधर का सृजित विशाल साहित्य भंडार और विचार प्रदर्शन विषयों की प्रचुर उपलब्धता से ही हो सका। जिसकी आधारभूमि अपने देश से उन्हें विरासत में मिली थी। उनकी कहानियों, उपन्यासों, व्यंग्य रचनाओं तथा लघु कथाओं में लिए गये कथानकों में मॉरीशस जीवंत हो उठा है। यद्यपि उत्कृष्ट वैचारिकता के धनी तथा अद्भुत प्रतिभासम्पन्न रामदेव धुरंधर के साहित्य में यत्र-तत्र वैश्विक असंगतियाँ भी मुखर हुई हैं, लेकिन अधिकांश अवसरों पर उन्होंने अपने देश के कोने-कोने की छानबीन ही की है। इसके प्रमाण स्वरूप विषय-वैविध्य के अंतर्गत इनके साहित्य में निरूपित कथ्य का अवलोकन अपरिहार्य हो जाता है। अन्यथा मूल्यांकन अधूरा तथा अवधारणापरक रह जायेगा।

जीवन के यथार्थ का वर्णन :-

जीवन किसी एक घटना या व्यक्ति का नहीं होता बल्कि यह किसी मनुष्य के जन्म से लेकर उसके अस्तित्व काल तक निरन्तर घटित होने वाली घटनाओं का संकलित पर्याय होता है। इसकी न तो कोई निश्चित परिभाषा हो सकती है। और न ही कोई अभिधात्मक अर्थ। मनुष्यों के भाव, विचार, अनुभूति, अनुभाव, मनोविकार आदि के साथ-साथ उसके रहन-सहन, खान-पान, वेशभूषा, संस्कृति, संस्कार, परम्पराएँ, सामाजिक संबंध, मानव मूल्य, अधिकार, कर्तव्य तथा नैतिकता आदि जीवन के अन्तर्गत ही आते हैं, अर्थात् जीवन का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक होता है, इसमें किसी सामाजिक प्राणी के समस्त कार्य-व्यापार शामिल होता हैं चाहे वह मनोगत हो या विचारगत । साहित्यकार द्वारा अपने परिवेश में जीवन के इन अंगों को जिस रूप में

देखा अथवा अनुभव किया जाता है उन्हें ठीक उसी रूप में अपनी रचनाओं में अवतीर्ण कर देना ही जीवन का यथार्थ वर्णन कहलाता है। इसके लिए साहित्यकार का यथार्थवादी एवं निडर होना आवश्यक होता है, क्योंकि विकृतियों का जन्म सदैव अधिकार सम्पन्न लोगों की कुत्सित विचार व्यवस्था से ही होता है और इनके खिलाफ लिखना अपने सर किसी बला के मोल लेने से कम नहीं होता है। असंगतियों के यथार्थ चित्रण के पीछे साहित्यकार की मंशा साधारण जन-जीवन से सहानुभूति के साथ प्रभुत्व सम्पन्न लोगों को कर्तव्यपरायण बनाने की होती है, जिसके लिए उसमें दृढ़ता और सामाजिक चेतना अनिवार्य होती है। कभी-कभी लेखक यथार्थ वर्णन में स्वानुभूति का भी सहारा लेता है, जिसमें उसका स्वयं का भोगा हुआ यथार्थ सर्वोपरि होता है अर्थात् वह अपने जीवन की किसी घटना या अनुभव को ही अपनी रचनाओं में कथानक का स्वरूप देता है।

रामदेव धुरंधर ऐसे ही यथार्थवादी परम्परा के लेखक हैं, जिनका सम्पूर्ण साहित्य मानव-जीवन के विविध पक्षों के चित्रण से परिपूर्ण है। इनकी लेखनी से जीवन का कोई भी अंग अभिव्यक्ति पाने से वंचित नहीं रह सका है। यदि इनकी रचनाओं को 'यथार्थवाद की वैचारिक प्रयोगशाला' कहा जाए तो इसमें अतिश्योक्ति नहीं होगी इनकी कृतियों में आये पात्रों के नाम तथा चरित्र आदि समाज में रहने वाले किसी व्यक्ति के ही होते हैं तथा उनके कार्य-व्यवहार दैनंदिनी जीवन से लिये गये होते हैं। उदाहरण के तौर पर कहानी 'विष-मंथन' में राजन के पिता की मृत्यु के पश्चात् उसके चाचा द्वारा अपने बड़े भाई के हिस्से की जमीन हड़प लेना केवल व्यक्ति विशेष का ही नहीं अपितु वर्तमान समाज के एक बड़े तबके की विकृत मानसिकता का बोध कराता है। लेखक ने विषय को और अधिक गम्भीर तथा यथार्थ बनाने के लिए आत्मकथनात्मक शैली का सहारा लिया है, उसी के शब्दों में-"मगर चाचा ने दाँव भी खूब लगाया था। बड़े भाई के हिस्से की जमीन हड़प लेने के लिए जमीन आसमान एक करता रहा था। माँ को बदनीयती का पता बहुत बाद में चला था। पर जब तक वह साँप के जहर को समझने के योग्य हुई, तब तक बहुत देर हो चुकी थी। चाचा ने पूरी जमीन को एक दिन अपनी सम्पत्ति घोषित करते हुए कुटिल मुस्कान से माँ को चौंका दिया था। " 1 वर्तमान समय में पारिवारिक संबंधों में पनपे स्वार्थ ने राजन की माँ जैसी उन सभी स्त्रियों को बेबस, लाचार तथा आर्थिक रूप से विपन्न बना दिया है, जो या तो आत्मनिर्भर नहीं हैं या जो विधवा जीवन व्यतीत करने को विवश हैं। राजन के चाचा जैसे पात्र वे सामाजिक कीड़े

हैं, जो जगह-जगह फैले होते हैं तथा ऐसे मौके की तलाश में रहते हैं। वर्तमान समाज जितना अधिक शिक्षित और आधुनिक होता गया पारिवारिक संबंधों में उतना ही अधिक बिखराव आने लगा। परिवार में कलह तथा घुटन आदि अन्तर्वृत्तियों का जन्म हुआ और इससे संबंधों में उदासीनता, स्वार्थीपन एवं अकेलेपन की प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती गई, जिससे नित्य प्रति होने वाली लड़ाईयाँ साधारण सी बात हो गयी। सहासी और उसकी सास के बीच होने वाले झगड़े का एक दृश्य देखने लायक है -"सुहासी इतना बोल रही थी तो सास ने अपने बेटे को आश्वासन दिया कि वह सुहासी का कलेजा खींचकर रहेगी और उसके इंग्लैण्ड जाने का सपना तो हर हालत में पूरा होगा। पर सुहासी वकील का नाम ले रही थी तो सास इसे हँसी में टाल नहीं सकी। यदि कुछ हो जाय तो किए-कराए पर पानी फिर जाएगा। उसने इसी बहाने से कजली को फोन किया था। कजली अपनी बेटी को वकील के चक्कर में पड़ने से रोक लें।" 2

उपनिवेशकालीन भारत और मॉरीशस की परिस्थितियाँ लगभग समान थीं। चाहे वह राजनैतिक नियन्त्रण की बात हो अथवा आर्थिक, शारीरिक और मानसिक शोषण की। स्वार्थ के लिए उत्पन्न किया गया धार्मिक संघर्ष हो या फिर देश की एकता को खण्डित करने के लिए अपनी भाषा को बलात थोपने की रीति, अलग-अलग धर्म के लोगों को आपस में लड़ाने की नीति रही हो अथवा उनकी ईसाईकरण की प्रवृत्ति, यूरोपीय व्यापारियों और उपनिवेशवादी शासकों ने भारत और मॉरीशस पर एक समान अस्त्र का प्रयोग किया। इन सब में भाषाई भेदभाव सर्वोपरि था। भारतीय समाज पर यदि अंग्रेजी को थोपकर उसकी एकता और राष्ट्रीय आन्दोलनों को कुचलने का प्रयास किया गया तो वहीं मारीच देश में फ्रेंच को आधिकारिक भाषा घोषित करके एक तरह से अभिव्यक्ति की आजादी पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया गया। उपन्यास 'पथरीला सोना' में देशराज और काशी के बीच किये गए कथोपकथन में इस पीड़ा की मर्मान्तक अभिव्यक्ति हुई है " देशराज को वे सारी बातें कहनी पड़ी जो जयपति के साथ हुई थी। दफ्तर में हुई बेइज्जती की चर्चा करते समय देशराज बेहद रुआँसा था। काशी को उन्हें फ्रेंच और क्रियोल के इस पचड़े में उलझाकर मानसिक ताप दे जाने वालों पर क्रोध आया। उन्होंने कहा तुम भाषा में कंगाल नहीं हो। भारत से तुम्हारे साथ जो भाषा आई है वह भाषा तो असाधारण है। यहाँ केवल इतना हो रहा है कि जिसके हाथ में सत्ता है, वह अपनी इच्छा से सबको हाँक रहा है। हमारे भारत में भी तो यही हो रहा है। अंतर केवल इतना है कि यहाँ फ्रेंच से हमें विवश बनाया जाता है और वहाँ अंग्रेजी से । ....

जिस भाषा में मेरी शक्ति है, यदि इसी भाषा में वहाँ लड़ाई छिड़ती तो मैं उन्हें बताकर रहता कि मैं कौन हूँ।"3 रामदेव धुरंधर जी आजादी से पहले तथा बाद के मॉरीशस की परिस्थितियों के प्रत्यक्षदर्शी साहित्यकार हैं। उन्हें अपने दादा परदादाओं से भी समाज व देश की दारुण अवस्था की अश्रुपूर्ण गाथा विरासत में प्राप्त हुई थी, जो अभी तक उनके मन-मस्तिष्क को किसी न किसी रूप में उद्वेलित करती रहती है तथा जिसके परिणाम में उन्होंने 'पथरीला सोना' जैसे वृहत् उपन्यास की रचना की। उपनिवेशयुगीन मॉरीशस में बड़े पैमाने पर भारत से गिरमिटिया मजदूरों को यहाँ लाया गया और उनके साथ दासों जैसा व्यवहार किया गया।प्रवासी भारतीयों की दुर्दशा पर अनेक साहित्यकारों ने अपनी लेखनी चलाई है, लेकिन धुरंधर जी का उपन्यास 'पथरीला सोना' प्रवासी भारतीय मजदूरों की गाथा बयां करने वाला महाकाव्य है। इसमें श्रमिकों का जीवन यथार्थ रूप में चित्रलिखित सा हो गया है। इसी तरह का एक और उपन्यास ' पूछो इस माटी से ' भी भारत से मॉरिशस लाये गये प्रवासियों की व्यथा-कथा कहने वाला उपन्यास है। गोरों का अत्याचार, शिशुओं की कातरवाणी, स्त्रियों की निर्भीकता व विवशता आदि का चंद शब्दों में किया गया मार्मिक वर्णन हृदय को द्रवित एवं आंसुओं से नेत्रों को नम कर देने वाला है-" कोई भी औरत या जवान लड़की घर के भीतर छिपने नहीं भागी, अबोध बच्चों ने अलबत्ता अपनी मांओं के आंचल खींचकर उन्हें आती हुई भयंकरता से अवगत कराना चाहा, पर मांएं तो अवगत थीं उस भयंकरता से। तो इन मांओं को क्या हो गया जो इस तरह चुपचाप खड़ी हैं? गोरों का डर नहीं रहा इन्हें ? या घोड़ों के नीचे कुचल जाना इन्हें स्वीकार्य हो गया ? नहीं, माँ इस तरह अपनी जान की बाजी मत लगाओ। ये गोरे बड़े निर्दयी हैं। भागकर कहीं छिप जाओ माँ ....।" 4

राजनीति किसी समाज अथवा व्यक्ति के जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग होती है लेकिन दुर्भाग्यवश इसकी भूमिका सदैव ही संदेहास्पद रही है। इसका वर्तमान स्वरूप तो और अधिक जटिल हो गया है तथा यह केवल चुनाव जीतकर सत्ता हथियाने का साधन मात्र होकर रह गयी है। वैसे तो राजनीतिक विसंगतियां हमेशा से ही साहित्यकारों का लक्ष्य बनती आयी हैं, लेकिन धुरंधर जी ने इस क्षेत्र में कुछ मौलिक प्रयास भी किये। इन्होंने अपनी व्यंग्य रचनाओं तथा लघुकथाओं में स्वतन्त्र रूप से राजनीतिक अनीतियों व अत्याचारों को कथानक बनाकर अधिसंख्य रचनाएँ कीं। वैसे भी राजनीति इनकी सर्वप्रिय विषय रही है इसलिए उनके साहित्य में इसका उपेक्षित रहना असंभव था। राजनीतिक पृष्ठभूमि पर केन्द्रित रचना 'राजनीति अपनों के लिये' में

पोषित कुप्रवृत्तियों को उजागर किया गया है। जनता के ये सेवक सत्ता की भूख में किसी भी हद तक जाने को तत्पर रहते हैं। स्वार्थी, पदलोलुप, अशिक्षित तथा कामी-प्रवृत्ति के इन नेताओं को अपने ही परिवार और रिश्तेदारों का हित नजर आता है तथा राजनीति में वंशवाद को बढ़ावा देना इनकी प्रमुखता होती है। उपरोक्त कुप्रथा का एक यथार्थ अंकन द्रष्ट्रव्य है -"उसने चाहा था कि बेईमानी के उसके पैसों से पूरा लाभ उठाकर सभी बेटे उसकी तरह हर चुनाव में छा जायें और जीतकर नामी मंत्री बने। परन्तु बेटों ने उसकी इच्छा के अनुरूप काम करके उसकी तबीयत कभी खुश नहीं की। ज्यादा से ज्यादा बाप को चुनावों में थोड़ा सहारा दिया। आवश्यकता न भी पड़ी तो भी मार-काट की। बाप की जीत जब-जब हुई उन्होंने जीत के सेहरे में अपना हिस्सा माना और बाप ने खुशी अनुभव करते हुए सोचा कि अपने को आम खाने से मतलब था, गुठली क्यों गिने ? बेटे जैसे भी हो चुनाव में सहयोग देते चलें। गुंडागर्दी भी चुनाव का अहम हिस्सा है।" 5 दूसरी साहित्यिक विधाओं की तुलना में धुरंधर जी ने वृहत् पैमाने पर लघुकथाओं की रचना की है। विभिन्न विषयों पर केन्द्रित लगभग बारह सौ लघुकथाएँ इनकी लेखनी से प्रादुर्भूत हुईं, जिनमें इन्होंने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों की टोह ली है। दूसरी विधाओं में जो विषय समयाभाव आदि कारणों से अनछुए रह गये थे उनका भी समावेश इनमें हो गया है। 'घर फिर बनेगा', 'छोटा जीव', 'शरीर की महत्ता', 'लाश पर अधिकार' तथा 'राधा और नारी' आदि अनेक ऐसी रचनाएँ हैं जिनमें जीवन की प्रत्याशा विविध रूपों में मुखरित हुई है। रचना 'शून्य का आकार' में दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों को निम्न शब्दों में उकेरा गया है-" एक वर्ष बाद बेटी की शादी तो हो गई, लेकिन यहाँ से एक नया अवरोध शुरू हुआ। घर बनाने के लिए दामाद को पैसे की आवश्यकता पड़ी और वह ससुर को अपनी खाना पूर्ति का भण्डार समझ बैठा। उसकी जितनी माँग थी ससुर देने की हालत में नहीं था। अब तो बात आगे बढ़ने की नौबत आ गयी। दामाद ने उसकी बेटी को घर से निकाला तो नहीं, लेकिन अपने घर में उसका जीना दुरूह कर दिया। " 6

रामदेव धुरंधरजी के उपन्यासों का कथ्य यदि एक तरफ देशकाल और परिस्थितियों के अनुसार स्वयं के देश की विषम और यथार्थ के चित्रण से भरे पड़े हैं , तो दूसरी तरफ उनमें स्वानुभूति भी कम नहीं है। इनके उपन्यासों की कथा का विस्तार

दो प्रकार से होता है।.वे परिस्थितियों के अनुकूल पात्रों का सृजन करतें हैं | 2.पात्रों के मनोभावों के आधार पर | 'चेहरों का आदमी ' उपन्यास में लेखक ने मॉरीशस की वर्ग विशेष की प्रभावित करने वाली राजनीति को मुख्य स्थान दिया है | इस उपन्यास का मुख्य पात्र पेशेवर कलाकार है।

फ्रांसीसी कलाकारों की तुलना में उच्च कोटि का चित्र बनाने पर भी उसे अपनी कला-प्रदर्शन का मौका सिर्फ इसलिए नहीं दिया जाता, क्योंकि न तो राजशेखर की कोई राजनीतिक पहुँच है और न ही अन्य कोई भारतीय मॉरीशस में किसी प्रकार का राजनीतिक पद धारण करता है। कला आदि प्रतिभाओं के प्रदर्शन का निर्धारण राजनैतिक नियन्त्रण में होने के कारण राजशेखर को यह मौका नहीं मिलता। राजनीति में कोई किसी का संबंधी नहीं होता, इसको सिद्ध करने वाला पात्र है राऊत, जो भारतीय होकर भी राजनीति की दलाली करके अपने ही लोगों को प्रताड़ित करवाता है। उपन्यास 'छोटी मछली बड़ी मछली' एक ऐसा मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास है, जिसमें उपन्यास की नायिका विनोदा और सरजू की प्रेमकथा ही कथानक का मुख्य बिन्दु है, तो विनोदा-नरेन्द्र, नरेन्द्र-शीतल, कुसुम-अनुराग, विनोद-माधव आदि की प्रेमकथा सहायक कथा के रूप में कल्पित की गयी है विनोदा का अनेक लोगों के साथ चलने वाला प्रेम-प्रसंग उसके चारित्रिक वैशिष्ट्य के साथ-साथ कथानक की रोचकता को भी दर्शाता है। उपन्यास 'पूछो इस माटी से' मॉरीशस में प्रवासी भारतीयों के शोषण और संघर्षों की पृष्ठभूमि पर लिखा गया है। उपन्यास का कथानक मौलिक व यथार्थ है तथा इसमें केवल मुख्य कथा ही विस्तार पाती है। समायानुकूल पात्रों का नेतृत्व बदलकर कथानक में श्रृंखलाबद्धता लाने का प्रयास दिखाई देता है। पारिवारिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखित उपन्यास 'बनते-बिगड़ते रिश्ते' में उपन्यास की नायिका सुधा का मनोवैज्ञानिक चित्रण कथावस्तु को यथार्थ बनाने में उपयोगी प्रमुख भूमिका निभाता है। कथावस्तु की पूर्णता, निरन्तरता, सार्थकता व उसकी उपयोगिता को बनाये रखने के लिए धुरंधर जी ने मनोविज्ञान का सहारा लेकर मानव-मन के सूक्ष्म से लेकर मानवीय स्वभाव की साधारण स्वाभाविक प्रक्रिया तक का चक्कर लगाया है, जिसको सुधा के पति पूरन, प्रेमी अतुल, सास कोसी, मामी तेतरी, भाई चेतन, भाभी कमलेशा आदि के जीवन में उतार-चढ़ाव व राग-द्वेष के साथ-साथ धनाभाव से जूझते ग्रामीण लोगों के अन्तर्द्वन्द्व की मार्मिक गाथा का वर्णन किया गया है। सहानुभूति और सद्भावना को आकर्षित करती है के द्वारा सकता है। 'सहमें हुए सच ' यूरोपीयकरण के प्रभाव से

मॉरीशस के संबंधों में उत्पन्न अलगाव, घुटन व अकेलेपन आदि का स्वाभाविक निरूपण करनेवाला उपन्यास है। इसमें आधुनिकता तथा परम्पराबोध की टकराहट स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। माधुरी और उसका बेटा सुजीत आधुनिकताजन्य प्रतीक है तो सुजीत की पत्नी आशा संस्कृतियों और संस्कारों की रक्षक रूप में सामने आती है, इसलिए इनमें परस्पर वैचारिक मतभेद की स्थिति दिखाई देती है। माधुरी जहाँ पैसे की भूख में रिश्तों को भी निगलने से परहेज नहीं करती , वहीं आशा पारिवारिक संबंधों के बिखराव को रोकने के लिए हर संभव प्रयत्न करती है। 'पथरीला सोना ' रामदेव धुरंधर द्वारा छः वृहत खण्डों में लिखित अमर ऐतिहासिक उपन्यास है। इस महाकाव्यात्मक उपन्यास में सन् 1834 ई. से लेकर सन् 2009 तक के कालखण्ड की प्रवासी भारतीय गिरमिटिया मजदूरों को सामाजिक ,पारिवारिक एवं आर्थिक दशाओं को अलग-अलग खण्डों में चित्रित किया गया है। उपन्यास के प्रत्येक खण्ड का अपना स्वतन्त्र अस्तित्व भी है और सभी खण्डों में उपन्यास-कला के तत्वों का अन्वेषण किया जा सकता है। उपन्यास का वृहद स्वरूप तथा अत्यन्त दीर्घ कालखण्ड का वर्णन करने पर भी कथानक की श्रृंखला की खण्डित नहीं हुई है। कथावस्तु में प्रासंगिक कथाओं का प्रयोग उपन्यास को रोचकता बढ़ाने और कथानक के विस्तार में सहायक सिद्ध हुई हैं। पात्रों की अत्यधिक संख्या-होने पर भी कथानक के विस्तार में कोई अवरोध नहीं आने पाया है, बल्कि अलग-अलग पात्रों का चरित्र व उनकी मनोदशा घटना को यथार्थपरक बनाने में समाप्त होती है। उसके अगले खण्ड में उसी परिवेश और स्थिति से प्रारम्भ होती है, इससे पाठक को इसका आभास भी नहीं होता कि वह किसी खण्ड का आरम्भ या अन्त कर रहा है। सम्पूर्ण उपन्यास में जिज्ञासा निरन्तर बनी रहती है। अगले पल मजदूरों के साथ क्या होने वाला है, इसका किसी को कोई अनुमान नहीं रहता। आकस्मिक एवं अप्रत्याशित घटनाओं के वर्णन द्वारा उपन्यासकार अन्त तक कौतूहल बनाये रखने में सफल रहा है। कथावस्तु में श्रमिकों की समस्या के साथ-साथ उन पर किये जाने वाले अमानुसिक अत्याचार, भाषाई भेद, परम्पराओं के संरक्षण का संघर्ष, राजनीतिक भ्रष्टाचार आर्थिक अभाव और अन्य सामाजिक विसंगतियों का दाहक मूल्यांकन हुआ है।

'विराट गली के बासिंदे' उपन्यास में मॉरीशस की वर्तमान सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्थाओं पर व्यंगात्मक शैली में तीक्ष्ण कटाक्ष व्यंग्य किया गया है, जिसका कथ्य विद्रूपताओं पर व्यंग्य से भरा पड़ा है। 'टोटका-टोटकी' नामक गाँव में

स्थित बासू चिरैया उर्फ शिवगणेश की शैलून की दुकान कथानक का वह केन्द्र बिन्दु है, जहाँ प्रायः नित्य-नूतन घटनाओं का आविष्कार होता रहता है। उपन्यास का सम्पूर्ण कथानक शिवगणेश और उसके शैलून की दुकान के इर्द-गिर्द ही घूमता नजर आता है। दूसरे विषयों पर व्यंग्य की अपेक्षा कथानक में राजनीतिक व्यंग्य का स्वरूप बड़ा ही नुकीला और चुटीला है। उपन्यास में हास्य और व्यंग्य दोनों का प्रयोग कथानक को और अधिक रुचिकर व रमणीय बना देता है। विसंगतियों तथा विद्रूपताओं पर गम्भीर व्यंग्य द्वारा यदि बौद्धिक जागरण के प्रसार के साथ ही नीति नियंताओं के ध्यानाकर्षण का भी प्रयत्न किया गया है, तो बेलछन दुखिरा जैसे पात्रों द्वारा पुराने अखबार की खबर से सरकार के पतन और पुन: चुनाव की अफवाह फैलाकर हास्य के माध्यम से पाठको का मनोरंजन भी किया गया है, इससे पाठक की जिज्ञासा और पढ़ने की ललक अन्त तक बनी रही है। कहीं किसी मनोरंजन कहानी के विधान द्वारा तो कहीं किसी घटना के वर्णन तो कहीं-कहीं स्वयं के विचार विश्लेषण द्वारा उपन्यासकार अपने लक्ष्य को साधने में सफल रहा है। राजनीतिक विषमताओं पर व्यंग्य उसकी प्राथमिकता थी, लेकिन वर्तमान समस्याओं का कोई पक्ष छूट न जाय, इसका भी उसने योग्य ध्यान आकर्षित किया है |

संक्षेपतः रामदेव धुरंधर जी एक सिद्धहस्त उपन्यासकार है। उनके उपन्यासों के कथानक अन्वितिपरक प्रभावात्मक एवं जनोपयोगी होते हैं। आवश्यकतानुसार अधिकतर उपन्यासों में मुख्य कथा का ही विस्तार पाया जाता है। कथानक का आरम्भ प्रायः आकस्मिक घटनाओं, प्राकृतिक सौन्दर्य वर्णन अथवा विचार विवेचन से हुआ है, मध्य भाग में अप्रत्याशित घटनाओं से जिज्ञासा को बनाए रखने तथा अन्त में आरम्भ और मध्य का निष्कर्ष दिखाने में धुरंधर जी की कोई सानी नहीं है। घटनाक्रम में स्वाभाविकता के साथ कल्पना का मणिकांचन संयोग इनकी एक अनन्य विशेषता है। अपने उपन्यासों की कथावस्तु में इन्होंने वर्तमान के साथ इतिहास को भी समान महत्व दिया है, जिसका जीता-जागता प्रमाण उनका विस्तृत उपन्यास 'पथरीला सोना ' है |

रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में पात्रों की संख्या आवश्यकतानुकूल एवं कथानक के स्वरूप के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है, किन्तु इससे उपन्यास के संतुलन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। उन्होंने अपने विस्तृत उपन्यास 'पथरीला सोना' में लगभग चार सौ काल्पनिक पात्रों के द्वारा कथावस्तु का ताना-बाना बुना है, किन्तु ऐसी स्थिति में भी

उपन्यास में गतिरोध की स्थिति नहीं उत्पन्न हुई हैं। वर्गगत वैविध्य इनके पात्र चयन की प्रमुख विशेषताएँ हैं, जिनमें पुरुष और स्त्री पात्रों के अलावा कृषक, जमींदार, मजदूर, नेता, भारतीय, गोरे, उच्च मध्यम और निम्न वर्ग आदि के पात्र उनके उपन्यासों में यत्र-तत्र उपस्थित होकर उद्देश्य प्राप्ति में सहायक बनते हैं। धुरंधर जी ने पात्रों के चरित्र-चित्रण में अधिकांशतः दो प्रकार की पद्धतियों का आश्रय लिया है। पहली शैली है विवेचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक, जिसमें वे स्वयं ही पात्रों के भावों, अन्त:वृत्तियों तथा विचारों आदि की छानबीन करते हुए तटस्थ भाव से सदसत् का निर्णय करते हैं तथा दूसरी पद्धति है अभिनयात्मक, जिसमें अन्य पात्रों के कथोपकथन अथवा संवाद से किसी पात्र का चरित्र उजागर होता है। पहली शैली के प्रयोग से जहाँ पात्रों के आन्तरिक चरित्र पर प्रकाश पड़ता है, तो वहीं दूसरी शैली पात्र के बाह्य चरित्र से सम्बन्धित होती है। धुरंधर जी ने पात्रों के चारित्रिक विकास के लिए उपरोक्त दोनों पद्धतियों का खुलकर प्रयोग किया है। उपन्यास 'बनते-बिगड़ते रिश्ते' में स्वयं लेखक द्वारा सुधा के चरित्र और मनोभावों का विश्लेषण दर्शनीय है-" सुधा के हृदय की तेज धड़कने सामान्य हुई। भाई के सामने आते वक्त वह भूल गई थी कि उसके कंधे पर हँसिया है और हाथ में खेत में ले जाने के लिए पानी की बोतल। पर वह अपने मजदूर रूप से बिल्कुल खीझ नहीं और न उसे चिन्ता ही हुई कि भाई उसे किस तरह से घूर रहा था। भाई ने जिस तेवर से 'अच्छी है' कहा था, उससे यही ध्वनि तो सामने आई थी कि वह आज भी सुधा के साथ डॉट-डपट से पेश आने की अपनी आदत से मजबूर था।" 7 इसी तरह उपन्यास 'पूछो इस माटी से' में मृणाल की उदासीनता देखकर कंवल अपने बच्चे को गोद में उठा लेता है। बच्चा पिता का प्यार पाकर आनंदित हो उठता है। ऐसी स्थिति में उसकी मनोदशा का विवेचन द्रष्ट्रव्य है- "सहसा उसे लगा कि जीवन ने उसके साथ बहुत बड़ा धोखा किया है। पता नहीं जीवन ने उसके साथ धोखा किया या उसने अपने जीवन के साथ धोखा किया ? कोठी में रहते हुए उसकी सामर्थ्य जहाँ तक जा सकती थी, वह अपनी पत्नी को सिरिल के पास जाने से रोक ही नहीं सकता था, लेकिन अपनी पत्नी के साथ गृहस्थी निभाने से उसे कौन रोक सकता था? धानी यदि दिन में सिरिल की थी, तो रात और रविवारों को वह एकमात्र अपने पति की थी।"8 उपन्यास 'पथरीला सोना' में उपन्यासकार ने प्रधानमन्त्री के सलाहकार हजारा जिसका नल खराब हो गया है और जिसे दफ्तर में रहते हुए बनवाकर वह अपने पद का दिखावा करना चाहता है |

'विराट गली के बासिंदे' उपन्यास में बेलछन दुखिरा का विवेचन इस तरह किया गया है -"माना कि लोग बेलछन दुखिरा को मूर्ख मानकर हँसने के लिए वही सब कहने लगते , जो उसने पुराना अखबार पढ़कर बाँचा सरकार का पतन हो चुका है। अतः चुनाव तो होकर रहेगा , पर एक कोण से बात सच भी तो हुई , क्योंकि लोगों की आज की दुनिया वही थी , जो बेलछन दुखिरा ने पुराना अखबार बाँच कर सुनाया। आज भी तो सरकार अपना पतन खो रही थी और इस बोवाई से उगता वह चुनाव की फसल होती |" 9

'पूछो इस माटी से ' में कंवल और कासी के इस वार्तालाप से कासी का समर्पण , मौसी पर किया गया अत्याचार तथा देसराज चिकित्सीय कुशलता इत्यादि का बोध होता है ,कासी कहता है -" तो अपनी जान हथेली पर लिये तुम्हारे साथ हूँ कंवल | '
'मौसी को आखिर कितना मारा गया होगा, जो वह मर गयी ।'

'मैंने उसे छटपटाते हुए देखा, कंवल।'

'काश ! देशराज यहाँ होता '

'उसकी दी हुई दवा थी मेरे पास।' 'अच्छा........।'

'फिर भी मौसी बच नहीं सकी।" 10

धुरंधर जी ने अपने दूसरे उपन्यासों की अपेक्षा 'बनते-बिगड़ते रिश्ते' नामक उपन्यास में इस शैली का अधिक प्रयोग किया है, जो निम्न अंश में पूरन और सुधा के वार्तालाप से पूरन की निराशावादी प्रवृत्ति और सुधा का साहसी एवं परिश्रमी व्यक्तित्व सामने आता है-

'सुधा कहती है, प्याज और लहसुन बोने के विचार को स्थगित कर दिया क्या ?'

' स्थगित तो नहीं किया, लेकिन सोचता हूँ, स्थगित कर देना होगा।'

' बहुत मेहनत का काम है। 'पूरन निराशा से बोला,

'तो मेहनत करोगे।' सुधा साहस से बोली,

'ऐसा कठिन काम है कि आधे प्राण के हो जाएँगे।' 'यानी स्थगित करने की ठान ली है।'

सुधा ने थोड़ा व्यंग्य किया।" 11

उपन्यास 'पथरीला सोना' में दिवाकर और मनीषा के बीच हुए आपसी संवाद से दिवाकर की शालीनता, समझ और उसका स्वाभिमानी होना तथा मनीषा की अक्रामकता व समर्पण का बोध होता है। दिवाकर कहता है-

'तुम्हें नहीं लगता मनीषा कि तुम वक्त से बहुत आगे चलना चाहती हो? मुझे नहीं लगता। जब बात यही है तो समझ लो मैं वक्त से पीछे चलने वाला लड़का हूँ। तब तो मैं कहूँगी ,तुम दबकर रहना चाहते हो। यह भी एक चरित्र है। दिखाने का चरित्र| तुम जानते हो ऐसा होने में कॉलेज में तुम्हारी कितनी चर्चा होती हैं | लड़कियाँ तुम पर मरती है। पर मरती हो। अपने दिवाकर के लिए मुझे ऐसा होना पड़ता है।

वैसी होकर भी तुम दिवाकर को नहीं पा सकती। तुम ही कहो, कैसी होकर मैं अपने दिवाकर को पा सकती हूँ।" 12 चरित्र-चित्रण की उपर्युक्त पद्धतियों के अतिरिक्त रामदेव धुरंधर ने पात्रों के चारित्रिक विकास के लिए आत्मविश्लेषणात्मक पद्धति का भी प्रयोग किया है। आत्मविश्लेषणात्मक अथवा आत्मालाप की शैली में पात्र स्वयं चरित्र अथवा चरित्र-निर्माण की परिस्थितियों का वर्णन करते हैं। यात्री पश्चाताप, पुर्नविचार अथवा विचारशीलता की स्थिति में इस शैली का जन्म है, यद्यपि विश्लेषण प्रधान चरित्र-चित्रण धुरंधर जी के उपन्यासों की पहचान है, लेकिन छुटपुट रूप से अभिनयात्मक और आत्मविश्लेषणात्मक शैली प्रमुख के दर्शन भी उनके उपन्यासों में हो जाते हैं।

रामदेव धुरंधर जी के उपन्यासों के पात्र सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं मनोवैज्ञानिक विद्रूपताओं से उत्पन्न संघर्ष को लेकर चलने वाले पात्र होते हैं। मानवीय गुण-अवगुण, सबलता निर्बलता, सफलता-असफलता, भाव-विचार आदि दोनों प्रकार की विशेषताएँ यथावसर इनके चरित्र में दिखाई देती हैं। आवश्यक नहीं है कि उपन्यास का नायक अथवा नायिका उदात्त चरित्र वाला ही हो, वह व्याभिचारी, कुत्सित मानसिकता या साधारण वर्ग का भी हो सकता है। उपन्यास 'छोटी मछली बड़ी मछली' की नायिका विनोदा स्वयं एक मर्यादाहीन स्त्री का प्रतीक है. इसी तरह उपन्यास 'विराट गली के बासिंदे' का नायक बासू चिरैया उर्फ शिवगणेश गाँव का एक मामूली नाई है। पात्रों में सहज मानवीय गुणों जैसे प्रेम, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, साहस,

कायरता, विद्रोह, दृढ़ता, आवेग मानसिक अन्तर्द्वन्द्व आदि की परिस्थितिजन्य अभिव्यक्ति कथानक को यथार्थ के धरातल पर लाने में तथा पाठक से आत्मीयता या नकार का सम्बन्ध बनाने में अहम कड़ी साबित होती है। समाज की विसंगतियों, विषमताओं एवं आडम्बरों में जीते हुए अथवा उनका अनुभव करते हुए पात्रों में खीझ, विद्रोह, घृणा, आवेश एवं परिवर्तन की भावनाओं का उत्थान व पतन भी देखने को मिलता है। स्त्री पात्रों में स्त्रियोंचित गुणों यथा समर्पण, श्रृंगार, मातृत्व, संघर्ष, सहनशीलता आदि के साथ अवगुणों यथा अतिशय कामोत्तेजना, अर्थलोलुपता, धोखा, पारिवारिक हल आदि का भी यथार्थ चित्रण हुआ है। ज्ञानी-अज्ञानी, विचारशील-विवेकहीन मनोवैज्ञानिक अथवा साधारण वर्ग-चरित्र वाले पात्रों की कल्पना धुरंधर जी की सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि का ही परिणाम है।

संवाद या कथोपकथन उपन्यास के वे तत्व हैं, जिनसे पात्रों के मनोभावों की अभिव्यक्ति, विचारों का सम्प्रेषण तथा चरित्र-चित्रण आदि किया जाता है, इसलिए इसका संक्षिप्त, स्वाभाविक एवं अवसर होना आवश्यक होता है। संवाद पात्रों के वैचारिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति के अनुरूप होना चाहिए अन्यथा असंगति दोष उत्पन्न हो जाएगा। कथोपकथन अथवा संवाद से ही कथानक का विस्तार होता है, कारणतः उसमें सरलता, रोचकता एवं रमणीयता आदि का होना आवश्यक माना गया है, यद्यपि नाटकों की अपेक्षा उपन्यास में कथोपकथन की आवश्यकता और अनिवार्यता अल्प होती है, लेकिन फिर भी यथावसर न्यूनाधिक मात्रा में किया गया संवाद अथवा कथोपकथन कथावस्तु निरन्तरता व जीवंतता तथा पात्रों के चरित्र वर्णन में सहायक होता है।

धुरंधर जी के उपन्यासों के सृजन में विश्लेषणात्मक एवं विवेचनात्मक पद्धति का प्रयोग अधिक हुआ है, सम्भवत: इसीलिए उनमें संवाद या कथोपकथन का अधिक अवसर नहीं मिल सका, किन्तु जहाँ भी यह अवसर मिला है. उपन्यासकार ने उसे भली -भाँति सुनाया है। इनके उपन्यासों में प्रयुक्त संवादों में एक उत्कृष्ट संवाद के लिए आवश्यक सभी गुण पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। इस कार्य के लिए उन्होंने भाषा और भाव दोनों का विशेष ध्यान रखा है। पात्रों की स्थिति के अनुकूल ही संवाद-योजना विधान उन्हें उपन्यास के पात्रों के स्थान पर जीवन जगत के यथाथ धरातल पर ले आता है। अशिक्षित अथवा निम्नवर्गीय पात्रों के संवादों में विचार शून्यता के साथ-साथ भाषा

की अनगढ़ता भी प्रकट होती है तथा शिक्षित व उच्चवर्गीय पात्रों के संवादों में विचार प्रवाह, भाषा संस्कार और उनका तार्किक दृष्टिकोण आदि देखने को मिलता है। साधारण संवादों में प्रेम, ईर्ष्या, द्वेष, विघटन, अलगाव, एकता आदि की व्यक्त हुई है, तो उदात्त एवं अनुदात्त भावनाओं को अभिव्यक्त करने वाले संवादों में विचार, विद्रोह, क्रोध, घृणा आदि के सुलभ दर्शन होते हैं। उदाहरण के तौर पर उपन्यास 'बनते-बिगड़ते रिश्ते' में क्रोधित बाबू और सुधा के बीच हुए संवाद को देखा जा सकता है, जिसमें भावों के अनुसार प्रयुक्त भाषा का स्वरूप वातावरण को स्वाभाविक बना देता है, सुधा कहती है- 'वह तो भाग गया है।

'लेकिन भागकर जाएगा कहाँ साला।"

"गाली मत बको!" सुधा जोर से बोली,

"क्यों?" वह गुराया,

"यह घर है।'

“हाँ, यह घर तो है।" बाबू सोच में पड़कर बोला।

"तो घर में इस तरह की गाली नहीं चल सकती। " 13

संटू ने बाबू पर आरोप लगाया था कि वह अपने भाई का हिस्सा हड़प रहा है। जब बाबू को यह बात पता चली, तो उसका क्रोधित होना लाजमी था। दोनों के बीच हुई मारपीट में सेंटू बाबू को लोटे से घायल कर रफूचक्कर हो गया। आवेश में आकर वह संटू को गाली दे रहा था, जब सुधा ने उसे रोकना चाहा, क्रोध की अवस्था में भाषा की अभद्रता मनोविज्ञान का तर्क है, इसलिए संवाद से परिवेश जीवंत हो उठा है और संवाद भी प्रसंगानुकूल ही। धुरंधर जी के संवादों में उपयुक्तता का गुण लगभग सर्वत्र विद्यमान रहता है, यथा 'पूछो इस माटी से' में मजदूर कंवल और उसकी प्रेमिका धानी के प्रेमालाप को देखा जा सकता है-

"मैं बड़े साहब से अपने लिए कमरा नहीं माँग सकती, धानी।” "मैंने कब चाहा ? "

“मैं तुम्हारा अपराधी हूँ।"

"मैं भी अपराधी कम नहीं। "

"तुम्हारा अपराध"

"तुम्हारे पैरों में जंजीर बनने आ गयी।" 14

संवाद की संक्षिप्तता, सरलता एवं प्रवाहपूर्णता से पाठक का उत्साह बना रहता है और घटनाक्रम में भी कोई व्यवधान उत्पन्न नहीं होता, हाँ इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि संवाद उद्देश्यविहीन न हों, अन्यथा कथानक की रहता श्रृंखलाबद्धता खण्डित हो जाएगी। धुरंधर जी ने अपने उपन्यासों में इस बात का बराबर ध्यान रखा है। साधारण एवं छोटे कथोपकथन का प्रयोग इन्होंने अधिक किया है। कहीं-कहीं कथोपकथन ज्यादा लम्बे हो गए हैं, लेकिन इससे उपन्यास में किसी प्रकार की बाधा नहीं आती, बल्कि पात्रों के चरित्र में निखार ही आया है। अवसर अनुकूल, उचित एवं सोद्देश्य कथोपकथन धुरंधर जी की विशिष्ट संवाद कला के प्रतिमान हैं। इसी प्रसंग में 'पथरीला सोना' उपन्यास के चतुर्थ खण्ड में शिवसागर और संवाददाता के बीच हुए कथोपकथन का एक उदाहरण द्रष्टृव्य है। संवाददाता शिवसागर से पूछता है-"आप हमारे देश में किसे गरीबो बढ़ाने वाले मनुष्य मानते हैं?

उनसे वही निकाला जा रहा था, जिसके प्रतिकार में उनकी धुनाई हो सकती थी। उन्होंने मान-अपमान के चक्कर से ऊपर उठकर कहा था अपनी तिजोरी भरने वालों को थोड़ी उदारता आ जाए, तो गरीबों का कल्याण हो जाएगा।

ये अपनी तिजोरी भरने वाले कौन हैं?

वे लोग जो इस देश में शुरू से शासक रहे हैं।

ये शासक कौन हैं ?

वे जो पैसे व्यापार और यहाँ तक कि जन-जन में हावी हैं।

-' कहना चाहते हैं |

आपको ऐसा लगता है, तो मैं क्या कर सकता हूँ।

मतलब शोषक की बात हो गयी, तो शोषित कौन है?

जो मजदूर हैं।

मजदूर से आपका मतलब खेतों में काम करने वाले तो नहीं ?

हाँ, यह लेकिन केवल इतना ही नहीं, मजदूर तरह-तरह के होते हैं | " 15 उपर्युक्त कथोपकथन में एक संवाददाता का प्रश्न कौशल, समाज सेवी कासामाजिक हित, वर्ग प्रतिनिधित्व संवाद की सार्थकता एवं उद्देश्य पात्रानुकूल संवाद विधान, मनोवैज्ञानिक, चिंतन दृष्टि और कथानक की गत्यात्मकता आदि संवाद- कला के सारे गुण विद्यमान हैं। कथानकों के प्रतिपाद्य की यथार्थ अभिव्यंजना में धुरंधर जी के कथोपकथन अथवा संवादों का विशेष योगदान है।

देशकाल अथवा वातावरण का सजीव चित्रण उपन्यास के कथानक को वास्तविकता के धरातल पर लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, क्योंकि उपन्यास में मानव-जीवन का चित्रण किया जाता है और मनुष्य का चरित्र उसका हाव-भाव एवं विचार आदि बहुत हद तक अपने देशकाल और वातावरण या उससे उत्पन्न परिस्थितियों से संयोजित होते हैं, इसलिए उपन्यास में संदर्भित युग, समाज और देश की प्रतीति कराने वाले सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और धार्मिक परिवेश का चित्रण आवश्यक होता है, जिससे पाठक उपन्यास पढ़ते समय उस समय, स्थान और वातावरण का यथोचित ज्ञान एवं विश्वसनीयता का अनुभव कर सकें। युगीन वातावरण की अनुपस्थिति से उपन्यास काल्पनिक एवं मनोरंजन प्रधान लगने लगता है, फलस्वरूप उपन्यासकार का उद्देश्य निष्फल हो जाता है। इस दृष्टि से भी उपन्यास में परिवेश की उपस्थिति अनिवार्य हो जाती है। भौतिक वातावरण के साथ-साथ कथानक में पात्रों की मनोवृत्तियाँ और हृदय-व्यापारों से संबंधित परिवेश का निरूपण भी निर्मित और संबंधित परिवेश का निरूपण भी अपरिहार्य होता है, अन्यथा पात्र निर्मित और आम जीवन से पृथक विदित होते हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों में उपन्यासकार को अपेक्षाकृत अधिक एहतियात बरतने की आवश्यकता होती है, जिसमें उस युग में प्रचलित विशिष्ट प्रथा, रीति-रिवाज, परम्परा, वेशभूषा, रहन-सहन, खान-पान आदि का सजीव चित्रण न केवल उपन्यास की यथार्थता में वृद्धि करता है, बल्कि उपन्यासकार के इतिहास, ज्ञान और समझ का भी बोध कराता है। स्थानीय परिवेश की जानकारी तथा घटना अनुरूप प्राकृतिक दृश्य का संयोजन उपन्यास में स्वाभाविकता, सजीवता और विश्वसनीयता लाने के लिए आवश्यक होता है। रामदेव धुरंधर के उपन्यासों में उपरोक्त विशेषताओं का अंकन बड़ी

सहजता से मिल जाता है। इनके वर्तमान की पृष्ठभूमि पर लिखे गये उपन्यासों में जहाँ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक परिवेश जीवंत हो उठा है, तो वहीं इतिहास को कुरेदने वाले उपन्यासों में ऐतिहासिक वातावरण का चत्रांकन भी इन्होंने बड़ी ही सफलता से किया है। उपन्यास 'बनते-बिगडते रिश्ते ' में सम्पन्न घराने की सुधा का विवाह गरीब घर के लड़के पूरन से हो जाता है । कल्पनाओं से निर्मित सुधा के सपने चकनाचूर हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में सुहागरात के समय उसके अंतर्मन के परिवेश के साथ ही एक निम्नवर्गीय घर का वातावरण द्रष्टव्य है -"उसकी सुहागरात ऐसी न थी, जिसे वह याद रखना चाहती। जिस सुहागरात को उसने अपनी कल्पनाओं में पिरोकर रखा था, सुहागरात की शय्या पर उन मीठे सपनों को चूर-चूर होना पड़ा था। उसे एक साधारण खाट मिली थी, जिस पर पूरन उसका हम बिस्तर हुआ था। टीन के नष्टप्राय घर में बेसुमार छेद थे, जिनसे चाँदनी बेरोक-टोक भीतर पहुँच रही थी। पूरन ने बिजली गुल करी ही थी, लेकिन भीतर पहुँचती हुई चाँदनी मानो अँधेरे को चिढ़ा रही थी। सुधा ने पूरन को अँधेरे में भी देखा था। पूरन की ओर से हर हरकत को उसने ऐसे स्वीकार कर लिया था, मानो अपनी ओर से किसी हरकत का मतलब छोटा-पूरे घर के लोगों का अपने दूधिया अँधेरे के बारे में परिचय देना। घर में तीन छोटे कमरे थे, एक में उसकी सास अपनी अंतहीन बीमारियों के साथ सारी रात करवटें बदलती रहती थी, उसके बगल में एक और छोटी सी खाट थी, जिस पर बाबू और संटू सोए थे। चादर के लिए दोनों के बीच काफी रात तक सोर मचा रहा था। " 16   भारतीय प्रवासी मजदूरों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखा गया उपन्यास ' पथरीला सोना' में देशकाल का वर्णन इन पंक्तियों में दर्शनीय है -" रामदरश ने अपने बांधवों के साथ जीवन के अपने बीस साल मारीच देश में गुजार दिए। उम्र ठीक-ठीक याद नहीं, लेकिन साठ साल तो पार कर ही चुके होंगे। उन्होंने अपने बाद भारत से बहुतों को मुझे मानेस ढाका आते देखा, जब भी नये लोग आए उन्होंने जानने की कोशिश की कि कहीं नये लोगों के बीच अपने भाई देवरस का आना तो नहीं हुआ ? भाई भारत में ही हो, तो उसकी खबर एक बार तो मिले।" 17

'पूछो इस माटी से' भारतीय मजदूरों की ऐतिहासिक गाथा पर लिखा गया एक और उपन्यास है, जिसमें मजदूरों की दयनीय दशा, उनका शोषण, उनको दी जाने वाली प्रताड़ना, भूखमरी, अशिक्षा आदि का हृदयविदारक चित्रण किया गया है। इसी संदर्भ में

निम्न पंक्तियों में मजदूरों के पारिवारिक एवं आर्थिक परिवेश की यथार्थ अभिव्यक्ति हुई है -"दोपहर बीत रही थी, लेकिन मजदूरी पर गये हुए लोग अभी तक नहीं लौटे थे। वे छोटे-छोटे बच्चे छोड़ गये थे, जो अब तक आंगतुकों के मुँह देख-देखकर भूल-भूलैया में पड़े हुए थे, पर अब उन मासूम चेहरों पर माँ-बाप के नाम अंकित हो गये थे और वे बुरी तरह रो पड़े थे। आंगतुकों में भी कई बच्चे थे। भूख से टूटकर ये बच्चे माँओ की गोदी से चिपके हुए थे कि के बच्चों ने अपने रोदन से इन्हें चौंका दिया। हर गोदी का बच्चा चौकना चारों ओर देखने लगा। रोने के लिए उनके होंठ लेकिन इन मासूमों को बदन कर दिया था। सभी औरतें झोपड़ियों के सामने एक गोल चट्टान पर बैठी हुई थी। सूर्य पश्चिम की ओर बढ़ रहा था। इस वजह से यहाँ छाया थी।"18 विसंगतियों पर करारा व्यंग्य करने वाले उपन्यास 'विराट गली के बासिंदे' में छल, कपट वादा खिलाफी, मक्कारी, नेताओं की भाषणबाजी और चुनावी परिवेश आदि इस प्रकार से प्रतिबिम्बित हुआ है - "मॉरीशस की यह धरती ही हो सकती थी, जो उस वक्त उसकी शेष बातें पूरी की पूरी सुन सकती थी। उसकी सड़ी हुई आत्मा की उस अनुगूंज से यह धरती बहुत गहरे आहत हुई थी। इस धरती ने उसे अपने सीने पर पापों की गठरी मानकर तय कर लिया था, उसे कैसे घाट पर मारना होगा। अब मॉरीशस की धरती को वक्त का इन्तजार रहता। वक्त आया, देश के लोहा मंत्री सुखेलाल बरसाने लाल ने चुनाव का अपना ताबीज ठीक करवाने के लिए उस ओझा स्वामी को अपने प्राइवेट घर में बुलाया। ओझा ने मंत्री पर आशीर्वाद की झड़ी लगायी कि यह जो चुनाव आ रहा है, इसमें उसकी इतने बहुमत से जीत होगी कि कहा जाएगा, देश का नया प्रधानमन्त्री पक कर तैयार हो गया है।" 19

इसी तरह मॉरीशस के सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक परिवेश के अन्तर्गत होगी कि कहा धुरंधर जी ने अपने उपन्यासों में पूजा-पाठ, मंदिर, रहन-सहन, खान-पान, धार्मिक आडम्बर, रंगभेद, भाषाई मिश्रण, ईख के खेतों की हरियाली, दिहाड़ी मजदूरों की दयनीय दशा, कथा-प्रवचन, झाड़-फूक, चुनावी छल-कपट, भाषणबाजी, त्यौहार आदि को विशेष तरजीह दी है, जिससे स्वतः स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने अपने उपन्यासों में देशकाल और वातावरण का उपयुक्त ध्यान रखा है।

भाषा और शैली का उपन्यास कला के तत्वों में विशेष महत्व होता है। भाषा यदि उपन्यासकार के भावों विचारों और उद्देश्यों को पाठकों तक पहुंचाने में सम्प्रेषण का

कार्य करती है, तो शैली का संबंध सम्प्रेषण की कला से होता है। शैली का अर्थ कुछ और नहीं, बल्कि भावों एवं विचारों को व्यक्त करने के तरीक से होता है। स्पष्ट शब्दों में कहा जाए तो उपन्यासकार अपनी अनुभूतियों ए संवेदनाओं को यथावत रूप में पाठकों को आस्वादन कराने के लिए जिस रचना पद्धति का प्रयोग करता है, सामान्यतया उसे शैली के नाम से आभीहित किया जाता है। उपन्यास की भाषा, कथानक, देशकाल और पात्रों के चरित्र, शिक्षा, संस्कृति एवं मानसिकता धरातल के अनुरूप होती है, इसलिए उसमें पाण्डित्यपूर्ण शास्त्रीय भाषा से लेकर ठेठ देशज एवं ग्राम्य भाषा का प्रयोग आवश्यकतानुरूप किया जाता है। व्याकरण सम्मत मानक भाषा के स्थान पर स्थानीय मुहावरों एवं लोकोक्तियों संयुक्त, सरल व स्वाभाविक भाषा का प्रयोग उपन्यास में वातावरण सृजन तथा यथार्थता लाने की दृष्टि से भी उपयुक्त प्रतीत होता है। उपन्यास की शैली का संबंध उपन्यासकार की वैयक्तिकता एवं कथावस्तु से अधिक घनिष्ठ होता है। वह अपनी व्यक्तिगत प्रवृत्तियों, कथानक के महत्व व उससे सम्बन्धित अपने वैचारिक दृष्टिकोणों तथा ज्ञान और समझ के अनुरूप शैली का चुनाव करता है, इस संबंध में निम्न कथन अवलोकनीय है -"उपन्यासकार अपनी कथावस्तु एवं पात्र रचना के अनुरूप ही शैली वैविध्य को अपनाता है। यही लेखक की वैयक्तिकता को भी प्रकट करती है, क्योंकि शैली व्यक्तित्व से अनुप्राणित होती है। इसके लिए आवश्यक होता है कि इसमें विशिष्टता तथा मौलिकता हो। सफल उपन्यासों की शैली में लेखक के व्यक्तित्व का प्रतिफलन होता है, उनमें वह विशिष्टता तथा मौलिकता होती है, जो उसे अन्य उपन्यासों से भिन्न कर सके। " 20 वर्तमान में उपन्यासों में प्रयोग की जाने वाली विविध शैलियाँ जाने वाली विविध शैलियाँ प्रचलन में हैं, जिनमें विवरणात्मक, आत्मकथात्मक, विश्लेषणात्मक, प्रतीकात्मक तथा पत्रात्मक आदि विशिष्ट प्रकार की शैलियाँ हैं। उपन्यासकार परिस्थितियों. पात्रों एवं घटनाओं के अनुकूल अपने विवेकानुसार शैलियों के चयन के लिए स्वतन्त्र होता है। उपन्यास में संकटात्मक शैली का प्रयोग सर्वथा निषिद्ध है, इसके स्थान पर बोधगम्यता, रोचकता एवं सरलता आदि गुणों से सम्पन्न विवृतात्मक शैली का विधान अधिक उपर्युक्त होता है।

राम देव धुरंधर जी के उपन्यासों की छानबीन करने से उपरोक्त वर्णित भाषाई एक शैलीगत विशेषताएँ बड़ी ही सहजता व सरलता से मिल जाती हैं। मॉरिशस भाषाई विविधता से युक्त देश है, जिसमें फ्रेंच, अंग्रेजी, क्रियोली, भोजपुरी, उद् अरबी, फारसी

आदि भाषाएँ प्रचलन में हैं। जनसंख्या की दृष्टि से अंग्रेजी, फ्रें- और भोजपुरी (हिन्दी) बहुतायत में प्रयोग की जाने वाली भाषाएँ हैं, तो उर्दू ए अरबी-फारसी का प्रयोग अत्यल्प मात्रा में तथा हिन्दी के साथ किया जाता है।

धार्मिक विचारों का निरूपण :-

निष्कर्ष के तौर पर धुरंधर जी के समग्र साहित्य में मानव-जीवन का यथार्थ व्यक्त हुआ है। उन्होंने जहाँ जैसा देखा तथा जो महसूस किया उसको उसी रूप में अपनी रचनाओं में अवतरित कर दिया। यदि जगह-जगह काल्पनिकता आमन्त्रण को स्वीकार करने या न करने का अधिकार अमेरिका जैसे शक्ति सम्पन्न देशों के पास होता है जो अपने फायदे के अनुसार निर्णय लेते हैं। 'चलो 'भाई, मॉरिशस चलो' नामक रचना में राजनीति के ऐसे ही आधुनिक परिवेश का चित्रण किया गया है -"विश्व अ-लिखित रामायण सम्मेलन शुरू तो हुआ लेकिन हर सम्मेलन की तरह प्रश्न सामने था कि इसमें अंतर्राष्ट्रीयता थी तो कितनी थी ? कुछ देशी श्रोता थे, कुछ सेवक थे और कुछ लीडर थे। भारत से सात लोग आए थे। चार पहले से ही यहाँ पर्यटक के रूप में आए थे कि अ-लिखित रामायण सम्मेलन के लिए ठहर गए।" विज्ञान आधुनिक जीवन का पर्याय बन गया है। मनुष्यों की सूक्ष्म से सूक्ष्म आवश्यकताओं से लेकर उसकी वृहत जिज्ञासाओं और महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति तक, सब में विज्ञान ने अपना महत्व सिद्ध किया है। आज मनुष्य विभिन्न ग्रहों की यात्रा स्वयं तो करता ही है अन्य ग्रहों पर मानव निर्मित यान और उपग्रह आदि भेजने लगा है जो विज्ञान की ही देन है। लघुकथा एक 'भग्न टुकड़े के परीक्षण' में विज्ञान के इसी महत्व को दर्शाया गया है -" एक यान का भग्न टुकड़ा दिखाई दिया। धरती के लिए वह धातु अज्ञात थी जिससे वह निर्मित हुआ था बाद में विज्ञान के एक विद्यार्थी ने इस पर अपना मत दिया कि दूसरे तमाम ग्रहों पर हमारी धरती के यान पहुँचते हैं और अक्सर वहाँ भग्न होते हैं।" धुरंधर जी ने आधुनिकता के प्रत्येक स्वरूप को अपने साहित्य में स्थान दिया। संस्कृति, समाज, धर्म तथा राजनीति आदि में जहाँ उन्हें आधुनिकता की गंध आयी, समय की माँग समझकर उन्होंने उसे स्वीकार किया तथा जहाँ लगा कि परिपाटी घिस गयी है, परम्पराएँ सड़ गयी हैं, धर्म आडम्बरों से दब गया है वहाँ उन्होंने परिवर्तन और आधुनिकता की अलख भी जगाई। इन सब का एकीकृत रूप हमें उनके सम्पूर्ण साहित्य में देखने को मिलता है। लेखक ने अपने उपन्यासों में आर्थिक ,सामाजिक ,सांस्कृतिक परिस्थितियों का भी वर्णन किया

हैं|

रामदेव धुरंधर का साहित्य : शिल्पगत अध्ययन -

जिस तरह से बहुत अधिक सुन्दर भावों, विचारों तथा उद्देश्यों से युक्त होने पर भी किसी शिल्पकार द्वारा निर्मित मूर्ति बिना किसी बाह्य अलंकरण के आकर्षक नहीं लगती हैं, ठीक उसी प्रकार से अत्यधिक उत्कृष्ट व सर्वोच्च प्रतिमानों वाली साहित्यिक रचनाएँ भी बाह्य सौन्दर्य विधान के अभाव में अनाकर्षक, अपूर्ण व महत्वहीन होती हैं। मूर्तिकला तो बिना सजावट के भी अस्तित्व में बनी रहती है लेकिन साहित्य कला के साथ ऐसा नहीं होता। वह अपने दूसरे पक्ष चित्रकार मूर्ति की सजावट करने के लिए तूलिका, रंग, हथौड़ा तथा छेनी आदि उपकरणों का प्रयोग करता है तो साहित्य सर्जक भाषा, शैली, अलंकार, रस तथा छन्द आदि कलापक्ष सम्बन्धी तत्वों की सहायता से अपनी सर्जना को प्रभावोत्पादक बनाता है। साहित्य में शिल्प के अन्तर्गत आने वाले तत्वों में भाषा एवं शैली सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। इसमें भी भाषा के बिना तो साहित्य सृजन संभव ही नहीं है। साहित्य में भाषा ही वह नींव है जिस पर सम्पूर्ण भावपक्ष और कलापक्ष रूपी दीवार का निर्माण होता है इसलिए इसकी महत्ता में स्वतः ही वृद्धि हो जाती है।

भाषा -

मॉरीशस एक इस तरह का देश है जहाँ उनको पत्थर पलटने से सोना प्राप्त होता है | इसलिए अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के सपने देखकर भारतीय मजदूर शर्तबन्द प्रथा के अनुसार पाँच वर्ष के एग्रीमेंट में मॉरीशस भेजे गए | इस शरतबन्द प्रथा के अधिकत्तर लोग बिहार तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश से थे, जो बहुत कम-पढ़े लिखे थे , जिनकी मातृभाषा भोजपुरी होने के कारण वह अंग्रेजी में एग्रीमेंट शब्द का उच्चारण भी नहीं कर पाते थे एग्रीमेंट से गिरमिटिया बना और गिरमिट से गिरमिटिया शब्द हुआ। चूँकि भारतीय श्रमिक एक एग्रीमेंट के अंतर्गत लाये जाते थे इसी कारण भोजपुरी बोली में उन्हें गिरमिटिया कहा जाने लगा |

इन सभी गिरमिटिया मजदूरों को यहाँ आने पर गुलामों से भी खराब जीवन जीने के लिए विवश होना पड़ता था। ये सब गिरमिटिया अपने साथ अपनी भाषा, अपनी संस्कृति, अपनी लोकपरंपराएँ भी लाये थे। उपन्यास में भोजपुरी भाषा का प्रयोग किया

था।

श्री रामदेवधुरंधर जी मॉरीशस के हिंदी साहित्य के ख्यातिप्राप्त साहित्यकार हैं। उनकी मातृभाषा भोजपुरी है, उनका सारा लेखनकार्य हिंदी में है। लेखक रामदेव धुरंधर आत्मकथ्य में लिखते है -"मॉरीशस के एक साधारण ग्रामांचल में जन्म पाकर यहीं जीवन की सीढ़ियाँ चढ़ता गया | अपनी पुश्तैनी ज़मीन यहीं होने से मेरी जड़ यहीं हुई और इस उम्र में अपने को चेतन कहूँ तो ज़मीन यही है | लिखने का शौक हिन्दी में पैदा हुआ , लेकिन सोच की आत्मा भोजपुरी थी।| "21

आगे प्रवेशद्वार में लेखक लिखते है -"विशेषकर बिहार प्रांत से लोगों के मॉरीशस आने में बहुलता रही ,इसलिए मैंने विशेषकर इन्हीं लोगों की भाषा ,रीति-रिवाज़ और संस्कार को केन्द्रित किया है। भोजपुरी तो मेरी मातृभाषा है ही | बिहार से आये हुए लोगों की इस परंपरा को आज भी महसूस करने की मेरी ऊर्जा का यही रहस्य है। " 22

प्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक चोम्स्की के अनुसार अपने वातावरण में फैली विविध संरचनाओं और शैलीगत विभिन्नताओं से युक्त तरह-तरह के वाक्यों के भीतर से बालक मन सहज वाक्य और आधारीकृत नियमों का पता लगा लेता है।' 23

'हिन्दी के सामाजिक संदर्भ' की भूमिका में रवींद्र श्रीवास्तव लिखते हैं: "भाषा व्यवस्था के रूप में 'लाँग' और भाषा-व्यवहार के रूप में पारोल' एक दूसरे का संदर्भ लेकर ही परिभाषित किए जा सकते हैं। व्यक्ति, भाषा-व्यवस्था को भाषा व्यवहार की विविध घटनाओं के आधार पर ही आत्मसात करता है।" 24

'पथरीला सोना' में प्रयुक्त भोजपुरी, उपन्यास की कथा तथा पात्रों को मज़बूत बनाती है । उपन्यास में प्रयुक्त भोजपुरी कहीं-कहीं पर अशिष्ट तथा अश्लील भी हो गई है। यह उस समय की बोली जाने वाली भारतीय आपवासियों की बोली थी | मैंने कई वृद्धों से भी हम अश्रीत शब्दावली के बारे में पूछा। उनके अनुसार ऐसी भाषा का प्रयोग होता था। इसलिए लेखक ने लोक भाषा के सहज रूप को रखा है जो उस बीते कल को भी अभिव्यक्त करती है। यह भोजपुरी बोली सामाजिक प्रयोग के आधार पर ऐतिहासिक और जीवंत है। मदिर पात्र गाता है ...

"दुख दे गइल दुसमनवा ,

कैसे टिकी अब परनवा ,

चिनती करत ई मदिरवा ,

दुःख हरगे मोर भगवनवा |"25

भाषा एक सामाजिक यथार्थ है। मनुष्य एक -सामाजिक प्राणी है। भाषा सामाजिक मनुष्य के संप्रेषण का एक ऐसा माध्यम है जिसकी सहायता से वह विशेष परिस्थिति में विशिष्ट प्रयोजन की सिद्धि हेतु इसका प्रयोग करता है और वह प्रयोग इसी संदर्भ एवं परिस्थिति में अर्थ ग्रहण करता है। कौन, कब, किसने किस विषय पर कहाँ बातचीत कर रहा है, ये सब भाषा के सामाजिक संदर्भ हैं जिनसे भाषा संदर्भित होती है अर्थात् वय, लिंग जाति, वर्ग, स्थान, संस्कृति एवं प्रयोजनों आदि के कारण भाषा में परिवर्तन होते हैं।

लेखक श्री रामदेव धुरंधर के उपन्यास 'पथरीला सोना? के प्रथम तीन खंडों में भोजपुरी बोली का अधिक प्रभाव है। उस काल खंड में 1834-1912 तक भारतीय आप्रवासी भोजपुरी ही बोलते थे। सबसे पहला हिन्दी में सार्वजनिक भाषण मणिलाल डॉ. ने मॉरीशस में दिया था। उन्हें गांधी जी ने आप्रवासी भारतीयों की दुर्दशा को देखते हुए, मॉरीशस भेजा था। वे एक वकील थे तथा वे मॉरीशस में सन् 1907 से 1911 तक रहे। उन्होंने ही मॉरीशस में औपचारिक रूप से आर्य समाज की भी स्थापना (सन् 1910) की थी। मॉरीशस का पहला पत्र "हिंदुस्तानी' (1907) भी उन्होंने ही निकाला था। उपन्यास के IV से VI भाग में भोजपुरी का प्रभाव तो है पर अपेक्षाकृत कम प्रयुक्त की गई है। इससे स्पष्ट होता है कि जैसे-जैसे देश में स्वतंत्रता के बाद शिक्षा का प्रचार-प्रसार होने लगा, भोजपुरी उपेक्षित होने लगी और धीरे-धीरे देश की मातृभाषा क्रियोल बन गई आज भोजपुरी पुरानी पीढ़ी की बोलचाल में है किन्तु गीतों का प्रचार खूब है जैसे, 'तोहर से लोतो नहीं मांगब एक गो फटफटिया कीन दे हमर जान " ठाकुर कहता है-

"लोग मुझे इस तरह आँखों निहार कर देखें मुझे अच्छा नहीं लगता, समझो करेजवा में छक से तीर लगकर छूकसे उस पार निकल जाते हैं। फटफटिया मेरी है तो मेरी है, लोग क्यों लार टपका रहे हैं, शुक्र है मेरो सेठानी को दवा आती है। मिर्च से औछ कर बीमारी को रफूचक्कर कर देगी।" 26

यह फटफटिया शब्द आज भी लोक में प्रचलित है। यह एक आधुनिक भोजपुरी गीत है। लोतो का अर्थ है मोटर तथा कीन का अर्थ है खरीदना ।

कुछ अन्य उदाहरण-

"ठकुरी के खेत का नाम पतुरिया खेत है" 27

"शाम को संध्या करना, दिनभर यह जो बोला बतियाया मन में पैठा ही रह गया तो उत्तर जाएगा" 28

उपन्यास के खंड एक तथा दो में कुछ इस प्रकार के उदाहरण प्राप्त होते हैं।

इन्द्रधनुष मानों मुंह बिराकर उनके सर के ऊपर उड़ते दूर निकल जाता था।

चिड़िया के पंखों में लासा डालना । शरीर में घाव बजबजाना, कौर चुभलाना, सिर फुटौव्वल, टांग अड़ाई

बहू का गौना कर लाते हैं। फिर धानी से गलचौर करती।

उसने गाँव के लजौनी घाट पर उसे अपना तैरना याद आ गया।

उसने देवन्ती के जोबन पर थूककर उसे ढेर सारी गालियाँ

ओढ़ा दीं |

फतुही सूख गई थी।

महिलाएँ जब इकट्ठे बैठती थी तो वे आपस में हल्वे- फुल्के मजाक भी किया करती थीं। जैसे-" घर में बहुरिया है देवरा, बाहर में झांका झूकी अब तो बंद समझो ।

कान में कपड़ा ठूंस से मैया मैं तो बोलकर रहूंगी,

अब यही तुम्हारी टेढाई है तो तुम्हारे भतार लछना को मैं सब सुनाऊँगी मोटी लकड़ी से अब तोहार पिटाई हो तो सात द्वार मरद की कीर्ति गाते फिरना। " 29

"सुखार से खेत जेल रहे थे।

नाक से नेटा बहता रहता है, सिर से लीख ढील निकालना।

मक्की तोड़कर चुभलाने में आनंद है।

नमक मिर्च से औछना |

हांकू डाकू, बात चलौनी, धरम खउआ, खून पीवा,

खखोरनी ।

मूतपीवा मुझे बददुआ देता है।

गोड़ लंबा करे तो काट डालूंगा।" 30

उसने बहू से कह रखा था कि पेट से छोकरी गिराएगी तो उसे बच्ची समेत आँगन में खदेड़कर दरवाजा बंद कर लेगी। परंतु कुछ महिलाएँ शासकों की मदद करती थीं। वे स्वयं तो बिकी ही हुई थीं पर दूसरों की बहू-बेटियों पर भी नज़र रखती थीं। खंड एक में आई पात्रा रूपमती ने तो स्वयं की पुत्री से कहा था कि सह ले बेटी सह ले, बाद में राज करेगी। रूपमती तो एक मोटा ताजा औरत है पूरी गाल चलावन और गाली बकने में तो और भी चांडालन

भाषायी समाज के रूप में हिंदी की सत्ता एक सामाजिक यथार्थ है जिसे इतिहास चक्र बोलियों के वंशानुक्रम के संबंध का अतिक्रमण कर एक निश्चित अर्थवत्ता उपलब्ध हुई | इसकी वजह है हमारी सामाजिक अस्मिता का सशक्त माध्यम भाषा का होना | भाषा का महत्व इस तरह है समाज के लोगों की भावना को समझना , चिंतन और दर्शन की दृष्टि से समाज के लोगों को जोड़ना। 'मैं' का 'हम' समुदाय के विस्तार का साधन बनती है भाषा। भाषा अपनी 'आंतरिक एकता 'और 'बाह्य विशिष्टता' दोनों को जोड़ती है तो वहीं पर दूसरी तरफ यह क्षेत्र, विविध क्षेत्रीय समाज के रूप में एक विशिष्ट इकाई भी मानी जाती है।आज साहित्य और भाषा नये तकनीकी के नये स्वरूप के साथ पाठकों के संपर्क में है।

मॉरीशस के प्रवासी साहित्यकारों में रामदेव धुरंधर अपने सृजन-कर्म में अपनी भाषा के प्रति सर्वाधिक सजग दिखाई देते हैं। यही कारण है कि उनकी भाषा इतनी अधिक स्पष्ट, सरल और भावानुगामिनी बन सकी है। इनके भावों तथा विचारों की तरह ही इनकी भाषा में भी कृत्रिमता की अपेक्षा नैसर्गिकता अधिक दिखाई देती है। जहाँ और जब भावों का जैसा वेग रहा है, भाषा ने भी उसी के अनुरूप अपना स्वरूप धारण

किया है इससे वह बनावटी की प्रवृत्ति से बच गयी है। धुरंधर जी की रचनाओं के अध्ययनान्तर्गत कहीं भी ऐसा प्रतीत नहीं होता कि सात समुन्दर पार अंग्रेजी और फ्रेंच जैसी प्रभुत्व वाली भाषाओं के परिवेश में रहने वाले किसी साहित्यकार ने इन रचनाओं को अंजाम दिया है। अपनी प्रतिभा और परिवेश के अनुकूल ही उन्होंने अपने भाषिक वैविध्य का परिचय दिया है, इसलिए उनकी रचनाओं में भाषा के सभी रूपों अर्थात् तद्भव, तत्सम, देशज और विदेशज के दर्शन सर्वसुलभ होते हैं। देशकाल और वातावरण तथा विषय के अनुरूप भाषा का चयन धुरंधर जी की प्रमुख विशेषता है। भाषा भावों तथा विचारों की अभिव्यक्ति में कहीं बाधा न बने इसके लिए उन्होंने भोजपुरी जैसी देशज एवं अंग्रेजी, फ्रेंच व क्रियोली जैसी गैर-भारतीय भाषाओं का भी खुलकर प्रयोग किया है। कुछ इसी तरह से समय, विषय और परिवेश को भी उन्होंने अपने भाषा चयन का आधार बनाया है। यदि विषय व्यंग्य का है तो भाषा प्रखर चुटीली तथा कहीं-कहीं अश्लील भी हो गई है जो कि स्वाभाविक ही है। लेकिन जब बात आती है कहानियों, उपन्यासों, लघुकथाओं व नाटकों की इनमें भाषा की सरलता, मधुरता और कोमलता स्वतः ही परिलक्षित होने लगती है। इसी तरह जब वे प्रवासी भारतीय मजदूरों की बात करते हैं तो उसमें जगह-जगह भोजपुरी भाषा की मिठास का अनुभव होता है परन्तु ज्यों ही वे शिक्षा, संस्कृति, परिवेश और व्यक्ति को अपनी रचनाओं के कथानक में शामिल करते हैं, त्यों ही उसमें अंग्रेजी, फ्रेंच और उर्दू के शब्दों की मात्रा बढ़ पाश्चात्य जाती है जो कि वातावरण की यथार्थता के लिए आवश्यक भी है। यद्यपि धुरंधर जी ने भोजपुरी के अतिरिक्त अंग्रेजी, उर्दू, फ्रेंच, क्रियोली आदि भाषा के शब्दों का खुल्लम खुल्ला प्रयोग किया है, लेकिन उनकी रचनाओं में हिन्दी के बाद अंग्रेजी भाषा के शब्द सर्वाधिक संख्या में मिलते हैं तत्पश्चात् उर्दू, फ्रेंच और फिर क्रियोली के अभिव्यक्ति को अधिक महत्व देने के धुरंधर जी ने आवश्यकतानुसार हा इन भाषाओं से लिए गये शब्दों का अर्थ और स्वरूप ग्रहण किया है। दूसरी भाषाओं के अधिक प्रचलित शब्दों को उन्होंने जस के तस ही रख दिया है। वैसे तो वे ऐसे नये शब्दों के प्रयोग से बहुधा बचे ही हैं लेकिन काम न चलने की दशा में उन्होंने परिचयात्मक शैली का सहारा लिया है।

प्रांजलता एवं प्रवाह पूर्णता के साथ-साथ लोकोक्तियों एवं मुहावरों का यथेष्ट प्रयोग भी धुरंधर जी की प्रमुख भाषाई विशेषता है। उन्होंने जगह-जगह इनका भरपूर प्रयोग किया है जिससे भाषा लाक्षणिक और अनुप्रासयुक्त न होकर मधुर और स्पष्ट हो

गई है। जितने मुँह उतनी बातें, सबुरी का फल मीठा होता है। आदि जैसी लोकोक्तियाँ तथा फूट-फूट कर रोना, टेढ़ी खीर होना, नाक में दम करना, भैंस के आगे बीन बजाना, अंधे की लाठी होना, मुसीबत मोल लेना, आग-बबूला होना एवं नौ दो ग्यारह होना आदि जैसे मुहावरों के प्रयोग से भाषा बोझिल न होकर लालित्यमय और अर्थ-गभीर्य से परिपूर्ण हो गयी है। शब्द चमत्कार की अपेक्षा अर्थबोध को अधिक महत्व देने के कारण ही वे भाषा की प्रवाहमयता बनाये रखने व संतुलन को साधने में सफल रहे हैं।

रामदेव धुरंधर जी के साहित्य में अभिधात्मक भाषा की भरमार दिखाई देती है। यदि उनकी व्यंग्य को व्यंजनात्मक तथा लाक्षणिक शब्दों की अपेक्षा छोड़ दिया जाय तो शेष साहित्य सरल एव स्पष्ट भाषा में लिखा हुआ मिलता है। अपनी साहित्यिक भाषा को आदर्शोन्मुख बनाने के लिए उन्होंने तत्सम शब्द प्रधान संस्कृतनिष्ठ भाषा का भी पर्याप्त प्रयोग किया है। इसी तरह तद्भव शब्दों की बहुलता एवं यथानुरूप देशज और विदेशज शब्दों के प्रयोग से भाषा चित्रात्मक हो गयी है। शब्दों के माध्यम से पाठकों के मानस पटल पर घटना अथवा परिवेश का चित्र अंकित कर देना धुरंधर जी की भाषाई दक्षता का सर्वाधिक प्रबल प्रमाण है। गद्य में बिम्ब और प्रतीकों का प्रयोग वस्तुतः साहित्यकारों द्वारा शुरू की गई एक नयी परिपाटी है, क्योंकि अब तक अवधारणा यह थी कि बिम्ब, प्रतीक, फँटेशी व अलंकार आदि केवल काव्यात्मक भाषा में प्रयुक्त किये जा सकते हैं लेकिन इधर के गद्य लेखकों ने इस मान्यता से विरोध सा दिखाते हुए गद्य में भी इनके प्रयोग की शुरूआत कर दी है। धुरंधर जी ने भी इन नवीन प्रयोगों को बखूबी अजमाया है जिससे उनके सम्पूर्ण गद्य साहित्य में बिम्बों और प्रतीकों की उपस्थिति अनिवार्य सी हो गयी है। उदाहरण के तौर पर नाटक 'इतिहास का दर्द' में एक मक्की और एक मुट्ठी अन्न के माध्यम से गरीबी और भुखमरी का बिम्ब इस प्रकार से उपस्थित किया गया है " है न अचरज की बात चाची! कोठी का बच्चा बच्चा एक मुट्ठी अन्न के लिए बिलख रहा है। कमाल है यहाँ मक्की पड़ी हुई है और कोई बालक इधर आकर इसे खा नहीं रहा है। भूख तो हमें भी लगी है। पर हम सोचते हैं एक मक्की और इतने सारे पेट! इसी तरह के बिम्ब-प्रतीक उनकी रचनाओं में जगह-जगह देखने को मिल जाते हैं।

संक्षेपतः धुरंधर जी एक भाषा-मर्मज्ञ और संवेदनशील साहित्यकार हैं। वे अपने साहित्य लेखन में भी उसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं, जो विचारों की अभिव्यक्ति तथा सम्प्रेषण में सहायक हो अर्थवान हो एवं साधारण से साधारण पाठकों की समझ में आ

सकें। साधारण पाठक को समझाने के लिए साधारण लेखक बनना साहित्कार की अनिवार्य शर्त होती है। इसी तरह चमत्कारवादिता का विरोधी होना साधारण लेखक का स्वाभाविक गुण होता है। रामदेव धुरंधर उपरोक्त सभी विशेषताओं पर संपूर्णत: खरे उतरते हैं इसलिए आलोचकों के पास उन पर भाषाई आरोपण के लिए कुछ बचता ही नहीं।

शैली :-

भाषा के बाद शैली कलापक्ष अथवा शिल्प का दूसरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व होती है जो अर्थ व अभिव्यक्ति पर बल न देकर सीधे कथानक को प्रभावित करती है इसलिए उपयुक्त शैली का चयन भी लेखक की साहित्यिक निष्णातता का पर्याय बन जाता है। धुरंधर जी ने अपने साहित्य लेखन में शैली चुनाव को विषयानुकूल बन सकी है। साहित्यिक विधाओं की भिन्नता और उनको भिन्न-भिन्न विषय वस्तु के अनुसार उन्होंने विविध प्रकार की शैलियों का प्रयोग किया है। जिसमें वर्णनात्मक, विवेचनात्मक आलोचनात्मक तथा व्यंगात्मक शैलियों प्रमुख से शामिल हैं। उनकी रचनाओं में यत्र-तत्र आत्मगत एवं संवाद शैली के दर्शन भी हो जाते हैं। व्यंग्य विधा में तो व्यंग्यात्मक शैली का ही प्रयोग किया जा सकता है लेकिन साहित्य को अन्य विधाओं में लेखक अपने विवेकानुसार शैली चयन के लिए स्वतन्त्र होता है। वह विषय के महत्व और उद्देश्य के अनुसार वर्णनात्मक, विवेचनात्मक या आलोचनात्मक शैली में विचारों की अभिव्यक्ति को तरजीह देता है।

आलोचनात्मक एवं व्यंगात्मक शैली का आदर्श रूप धुरंधर जी के विशाल व्यंग्य साहित्य में देखने को मिल जाता है, जिसमें उन्होंने अपने देश में व्याप्त सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक व सांस्कृतिक विसंगतियाँ एवं विद्रूपताओं को कथानक के केन्द्र में रखा है। इसी तरह नाटकों और कहानियों में संवाद शैली और उपन्यासों तथा लघुकथाओं में वर्णनात्मक व विवेचनात्मक शैली का प्रयोग अधिक हुआ है। उपन्यास जैसी दीर्घ विधा में कथानक को विस्तार देने तथा पात्रों के चरित्र चित्रण आदि में वर्णनात्मक और विवेचनात्मक शैली सर्वाधिक उपयुक्त होती है इसलिए धुरंधर जी ने अपने उपन्यासों के साथ ही अन्य विधाओं में इनका भरपूर उपयोग किया है। उनके महाकाव्यात्मक उपन्यास 'पथरीला सोना' में वर्णनात्मक और विवेचनात्मक शैली तो अपने चर्मोत्कर्ष को पहुँच गई है। यह ऐसा उपन्यास जिसमें सभी प्रकार की भाषा और

शैलियों का निवर्हन किया गया है। 'छोटी मछली बड़ी मछली' जैसे मनोवैज्ञानिक उपन्यास में जीवनी शैली का पुट दर्शनीय है। इसी तरह, पारिवारिक सम्बन्धों की पृष्ठभूमि पर लिखा गया उपन्यास 'बनते-बिगड़ते रिश्ते' में कथानक को विस्तार देने में पत्रात्मक शैली का भी सहारा लिया गया है। लघु कथाएँ तो पूरी तरह से वर्णनात्मक और विचारात्मक शैली पर निर्भर हैं जबकि संस्कृति और परम्पराओं का पालन करते समय कहीं-कहीं इतिवृत्तात्मक शैली का प्रभाव भी परिलक्षित हो गया है।

अभिकथन का अर्थ यह है कि अपने व्यक्तित्व, ज्ञान और समझ के अनुरूप ही धुरंधर जी ने अपने शैलीगत वैविध्य को अपनी रचनाओं में बडी निपुणता से प्रयोग में लाया गया है | सरलता ,रोचकता एवं प्रभावोत्पादकता इत्यादि उनकी शैली के अंतर्गत कुछ ऐसी लाक्षणिकताएँ हैं जो भाषा के साथ समन्वय स्थापित करने में अहम योगदान अदा करती है | कोई विशिष्ट साहित्यकार ही ऐसे होंगे जिनकी शैली में इतनी ज्यादा विभिन्नता , यथार्थता के साथ -साथ मौलिकता का आग्रह दिखाई देता हो एक साथ कथावस्तु को विस्तार तथा गति देने में , पात्रों का चरित्र-चित्रण करने में ,परिवेश का निरूपण करने में एवं लेखक के उद्देश्य को स्पष्ट करने में इन शैलियों का अधिक महत्व होता है |

निष्कर्ष :-

रामदेव धुरंधर जी ने अपनी भाषा को प्रभावशाली बनाने और उसमें जीवंतता लाने के लिए उन्होंने कई मुहावरों का प्रयोग किया है जैसे -काटो तो खून न निकले ,संतोष का फल मीठा होता है ,अपना उल्लू सीधा करना ,गिरगिट की तरह रंग बदलना ,टेढ़ी खीर होना इत्यादि कहीं-कहीं हास्यास्पद भाषा की भी प्रयोग किया है - 'सफेद बालदार आओ और काले बालदार हो जाओ ' , एड्स रोग सदा बहार जीवन ' , 'रक्तचाप को ठेंगा ,'फिर से कौमार्य पाने का नुस्खा ', 'महिलाओं के एक सौ दो सुख ' आदि | उपन्यासों में उन्होंने अंग्रेजी ,उर्दू ,फ़ारसी ,संस्कृत तथा भोजपुरी शब्दों का भी प्रयोग किया है | 'छोटी मछली बड़ी मछली ' उपन्यास में मनोविश्लेषणात्मक शैली और जीवनी शैली का मिश्रण पाया जाता है | 'बनते बिगड़ते रिश्ते ' में पत्रात्मक शैली का कहीं-कहीं प्रयोग किया गया है | ' चेहरों का आदमी ' उपन्यास में चेतन प्रवाह शैली का प्रयोग किया गया है | ' विराट गली के बासिंदे ' उपन्यास में व्यंजनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है | इतिहास के साथ उनका विस्तृत उपन्यास 'पथरीला सोना ' में भारतीय श्रमिकों

के उत्पीड़न ,दमन और शोषण का वर्णन करते हुए विवरणात्मक और वरणनात्मक शैली का प्रयोग हुआ है |

प्रस्तुत अध्याय में मैंने भावपक्ष के अंतर्गत उपन्यासों के कथ्य ,पात्र परिचय ,संवाद , परिवेश ,भाषा शैली ,उद्देश्य तथा कलापक्ष के अंतर्गत विभिन्न शैलियों का विवेचन किया है |

संदर्भ-सूची :-

1. विषमंथन-रामदेव धुरंधर -पृ.21

2. जन्म की एक भूल -रामदेव धुरंधर-पृ.199

3. पथरीला सोना .भाग 1-रामदेव धुरंधर -पृ.102-103

4. 'पूछो इस माटी से ' .रामदेव धुरंधर .पृ-427

5. बंदे आगे भी देख .रामदेव धुरंधर -पृ.120

6. चेहरे मेरे तुम्हारे .रामदेव धुरंधर-पृ.136

7. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर-पृ 189

8. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर-पृ.466

9. विराट गली के बासिन्दे-रामदेव धुरंधर .पृ.97

10. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर .पृ.83

11. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर -पृ ,151

12. पथरीला सोना .भाग 4.रामदेव धुरंधर .पृ.235

13. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर-पृ.17

14. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर .पृ.146

15. पथरीला सोना - भाग 4 रामदेव धुरंधर .पृ.218-219

16. बनते-बिगड़ते रिश्ते .रामदेव धुरंधर-पृ.12

17. पथरीला सोना भाग .1.रामदेव धुरंधर .पृ.13

18. पूछो इस माटी से .रामदेव धुरंधर .पृ.25

19. विराट गली के बासिंदे-रामदेव धुरंधर .पृ.119

20. मॉरीशस का हिन्दी साहित्य .एक समृद्ध परंपरा .डॉ. सतीश चंद्र अग्रवाल .पृ.127

21. पथरीला सोना .भाग 1 .रामदेव धुरंधर .पृ. 50

22. वही .पृ.55

23. हिन्दी का सामाजिक संदर्भ.डॉ सतीश अग्रवाल. पृ.1

24. वही

25. हिन्दी का सामाजिक संदर्भ- डॉ. सतीश अग्रवाल -पृ.37

26. पथरीला सोना भाग-3 .रामदेव धुरंधर -पृ.21

27. वही .पृ.127

28. वही .पृ-214

29. पथरीला सोना भाग 1 .रामदेव धुरंधर .पृ.76

30. वही .पृ.237